वर्तमान अहिष्णुता के दौर में रचनाकार की भूमिका

डॉ. अनीता शर्मा
एम. जी. एस. एम. जनता कॉलेज करतारपुर

भारत की गणना विश्व के उन गिने-चुने देशों में होती है, जिसके पालने में सभ्यता न केवल विकसित हुई अपितु उसने अपनी सुगंधि से अन्य शब्दों एवं समाजों को भी सुवासित किया | शिक्षा, ज्ञान-विज्ञान, साहित्य और कलाओं के क्षेत्र में अग्रणी इस देश को विश्वगुरु के रूप में समादृत किया गया |

सांस्कृतिक एवं आर्थिक दृष्टि से संपन्न इस देश की समृद्धि विदेशियों की आँखों की किरकिरी बन गई और विदेशी आक्रमणों का जो सिलसिला आरम्भ हुआ वह सैंकड़ों वर्षों तक निरंतर जारी रहा | विदेशी आक्रमणकारियों ने भारत के अधिक वैभव को ही नहीं लूटा बल्कि उसकी सांस्कृतिक विरासत को भी नष्ट-भ्रष्ट करने में कोई कसर बाकी नहीं रखी | मध्यकाल तक आते-आते भारत अज्ञान, अंधविश्वास, कुरीतियों और धार्मिक असहिष्णुता के चक्रव्यूह में पूरी तरह फंस चूका था | ऐसे संघर्षपूर्ण समय में संतों, धर्मगुरुओं, महात्माओं और मनीषियों ने समाज में चेतना लाने के लिए पदयात्राओं, प्रवचनों और साहित्य द्वारा समाज का पथ प्रदर्शन किया |

वर्तमान समय में असहिष्णुता या असहनशीलता का प्रशन बड़े ज़ोर-शोर से उठाया जा रहा है | साहित्यकार सरकार को सम्मान लौटा रहे हैं, तो राजनीतिज्ञ एक-दुसरे को दोषी ठहराकर अपनी राजनितिक रोटियाँ सेंकने में व्यस्त है | मनोरंजन जगत से जुडी हस्तियाँ भी विवादास्पद बयान देकर इस आग को हवा देने का काम कर रही हैं |

इन सिथितियों में हमारे सामने असहिष्णुता के सन्दर्भ में दो प्रशन उभरकर सामने आते हैं |

1. क्या साहित्यकार की कोई सोंची-समझी सामाजिक या अन्य भूमिका होती है ?
2. क्या कुटिल राजनीति द्वारा आज के दौर पर ही असहिष्णुता आरोपित की जा रही है या इस से भी कहीं अधिक असहिष्णुता के दौर रहे हैं ; और क्या हर युग में कलम उठाने का समूचा कर्म ही किसी न किसी प्रकार की असहिष्णुता का प्रतिकर्म नहीं रहा ?

यदि हम साहित्य के प्रयोजन की बात करें तो साहित्यकार की भूमिका अत्यंत व्यापक मानी गयी है | प्राचीन काव्यशास्त्रों ने भी 'कला जीवन के लिए' का जो सिद्धांत दिया, उसका केंद्रबिंदु भी साहित्यकार की भूमिका के साथ सीधे तोर पर जुड़ता है | प्रत्येक साहित्यकार सामाजिक दायित्व के साथ संपृक्त हिकर साहित्य रचना करता है, तो समाज में अराजकता अथवा अव्यवस्था की स्थितियां उत्पन्न होने की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता है |

'असहिष्णुता' के सन्दर्भ में गहन रूप से विचार करें तो यह कोई नया शब्द नहीं है | जब विदेशी हमलावरों ने भारत को लूटने की मंशा लिए हुए इस पावन धरती पर साम्राज्य स्थापित किये, तब असहिष्णुता अपने चरम पर थी | उसका प्रतिकार करते हुए हमारे संतों, महात्माओं तक ने कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त की थी | गुरु नानकदेव ने 'सुरासान खसमाना कीआ हिन्दुस्तान डराइआ' आदि पदों द्वारा मुगलों द्वारा मचाई अराजकता और असहिष्णुता को रेखांकित किया तो कबीर, संत तुकाराम, समर्थ गुरुरामदास जैसी विभूतियों ने अपनी लेखनी एवं प्रवचनों द्वारा सामाजिक समरसता का प्रचार-प्रसार करते हुए

सांप्रदायिक सद्भाव की स्थापना हेतु भरसक प्रयत्न किये | समय के साथ-साथ यदि असहिष्णुता बढ़ी तो विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों के बीच की खाई को पाटने के लिए प्रयास भी जारी रहे | अंग्रेजों की कुटिल नीति 'फूट डालो और राज करो' के प्रत्युत्तर में परस्पर सहयोग और सामाजिक पुनरुत्थान के फलस्वरूप ही स्वतंत्रता आन्दोलन को सफलता प्राप्त हुई | स्पष्ट है कि आज यदि हम असहिष्णुता की बात करते हैं तो यह कोई न्य मुद्दा नहीं है | सच्चाई यह है कि आज इसे नया रंग दिया जा रहा है, यह एक साहित्यकार द्वारा उठाया गया निजी कदम था जो शीघ्र ही एक बहस के रूप में परिवर्तित होकर हम सब के सामने हैं |

सर्वप्रथम हिंदी साहित्यकार उदय प्रकाश ने ४ सितम्बर २०१५ को साहित्य अकादमी पुरस्कार लौटाने की घोषणा की | इसका कारण बताते हुए उन्होंने फेसबुक पोस्ट में लिखा- "पिछले कुछ समय से हमारे देश में लेखकों, कलाकारों, चिंतकों और बौद्धिकों के प्रति जिस तरह का हिंसक, अपमानजनक, अवमाननापूर्ण व्यवहार लगातार हो रहा है, जिसकी ताज़ा कड़ी प्रख्यात लेखक और विचारक तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित कन्नड़ साहित्यकार भी कलबुर्गी की मतान्ध हिन्दुत्ववादी अपराधियों द्वारा की गई कायराना और दहशतनाक हत्या है, उसने मेरे जैसे अकेले लेखक को भीतर से हिला दिया है | अब यह चुप रहने का और मुंह सिलकर सुरक्षित छिप जाने का पल नहीं है वरना ये खतरे बढ़ते जाएंगे | "मैं साहित्यकार कलबुर्गी की हत्या के विरुद्ध में 'मोहनदास' नामक कृति पर २०१०-११ में दिए गये साहित्य अकादमी सम्मान को विनम्रता लेकिन सुचिंतित दृढ़ता के साथ लौटाता हूँ"[1] |

उदयप्रकाश के इस कदम को व्यापक समर्थन मिला और कृष्णा सोबती, नयनतारा सहगल, अशोक वाजपेयी, दिलीप कौर टिवाणा, सुरजीत पातर, सारा जोसफ़ सहित लगभग २६ साहित्यकारों ने पुरस्कार लौटा दिये अथवा लौटाने की घोषणा कर दी | इस के औचित्य के सन्दर्भ में कृष्णा सोबती लिखती हैं- "लेखक किसी भी चीज़ को गहराई से देखता है, यह लेखकीय कर्म भी है | जब कोई चीज़ उसे परेशान करती है तो विरोध करने का इससे अच्छा तरीका नहीं हो सकता कि वह खुद को मिले सम्मान को लौटा दे"[२] |

अशोक वाजपेयी को साहित्य अकादमी द्वारा मूकदर्शन बने रहने की गहरा क्षोभ है तो पंजाबी कवि सुरजीत पातर अपना तर्क देते हैं- "मैं अकादमी के महत्त्व को घटाना नहीं बल्कि उसे आवाज़ उठाने के लिए जगाना चाहता हूँ"[३] |

३० अगस्त २०१५ को कन्नड़ साहित्यकार कलबुर्गी की हत्या से पूर्व महाराष्ट्र के चर्चित कम्युनिस्ट नेता और साहित्यकार गोविन्द पनसारे २० फरवरी २०१५ को कट्टरपंथियों की हिंसा का शिकार हो चुके थे | कलबुर्गी की हत्या के एक महीने बाद भी किसी की गिरफ्तारी नहीं हुई | यह ज़ख़्म अभी ताज़ा ही था कि २८ सितम्बर २०१५ को दिल्ली के समीप दादरी में मोहम्मद अख़लाक़ की गोमांस खाने की अफवाह के कारण न्रशंस हत्या कर दी गई | बौद्धिक समाज ने इसे निरंतर बढती दक्षिणपंथी असहिष्णुता का परिणाम माना | कथित तोर पर संघ परिवार से जुड़े कुछ कट्टरवादी संगठनों द्वारा दी गई देश छोड़ देने की धमकियों ने बुद्धिजीवी समाज को और भी आहात किया | साहित्य जगत के इतर रंगकर्मी माया कृष्णराव ने दादरी काण्ड के विरोध में संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार लौटा दिया |

सलमान राश्दी ने त्वीट करके वर्त्तमान समय को 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए डरावना समय' की संज्ञा दी |

साहित्यकारों एवं समस्त बुद्धिजीवी समाज को इस ज्वलंत प्रश्न ने दो वर्गों में विभाजित कर दिया | एक वर्ग पुरस्कार लौटाने का समर्थक है तो दूसरा वर्ग इसे 'सुर्ख़ियों में बने रहने' और 'स्वयं को शहीद घोषित करने के लिए रचा गया प्रपंच' या भेड़चाल' मानता है | वरिष्ठ हिंदी आलोचक नामवर सिंह, साहित्यकार असगर वजाहत, अभिनेता अनुपम खेर, साहित्य अकादमी के अध्यक्ष विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, बंगला कवि नीरेंद्रनाथ चक्रवर्ती, चेतन भगत, असम साहित्य सभा के अध्यक्ष ध्रुवज्योति बोरा, कवि शंखो घोष साहित्यकारों द्वारा पुरस्कार वापसी का समर्थन नहीं करते |कवि नीरेंद्रनाथ इसे बेहद निंदनीय मामले के विरोध का बहुत कमज़ोर तरीका मानते हैं तो धुब्ज्योती बोरा एक स्वायत्तशासी संस्था के 'बेजा राजनीतिकरण' से चिंतित है | अभिनेता अनुपम खेर इसे भाजपा विरोधी लेखकों की 'राजनीति से प्रेरित' प्रतिक्रिया के रूप में देखते हैं- "जब तसलीमा नसरीन के साथ बुरा बर्ताव किया गया तो किसी ने पुरस्कार नहीं लौटाया"[4] | १९७५ के आपातकाल, १९८४ के सिख विरोधी दंगों, १९९२ के मुंबई और २०१३ के मुज़फ्फरनगर के दंगों तथा आतंकवादियों से त्रस्त कश्मीरी पण्डितों के पलायन की घटनाओं पर ठोस प्रतिक्रिया व्यक्त न करने वाले साहित्यकारों को कठघरे में खड़ा करते हुए असगर वजाहत प्रश्न करते हैं-"साहित्य अकादमी कहने के लिए ही सही, एक स्वायत्तशासी संस्था है, जहाँ लेखकों का एक पैनल ही लेखक को पुरस्कार देता है | पुरस्कार उस पैनल को लौट रहा है ? पुरस्कार देने में अगर सरकार की भूमिका मानी भी जाए तो लेखकों को ये सम्मान कांग्रेस सरकार ने दिया हैं और यदि उन्हें लौटाया जा रहा है तो उसी

सरकार को लौटाना चाहिए | मोदी सरकार का सीधा विरोध न करके पुरस्कार लौटाना कहाँ तक उचित है ?"[5] |

स्पष्ट है कि पुरस्कार लौटाने की साड़ी कवायद कहीं न कहीं राजनीति से प्रेरित है | लेखक की कलम उसे आमजन की अपेक्षा ऊपर उठाकर उसे समर्थक प्राणी बनाती है | इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए लेखक अपने विरोध करने के लोकतांत्रिक अधिकार का इस्तेमाल अन्य अनेक ढंगों से भी कर सकते हैं | "भारत एक लोकतांत्रिक देश है और लोकतंत्र में जनता की भागीदारी का विशेष महत्त्व है | अत: हमारे यहाँ सामुदायिक प्रयासों को मजबूत बनाने तथा उनमें तेज़ी लाने की दिशा में बहुत कुछ किये जाने की आवश्यकता है"[6] | लेखक इस आवश्यकता की पूर्ती में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं |

लेखकों को समझाना होगा कि पुरस्कार लौटा कर वे सुर्खियाँ तो बटोर सकते हैं, किन्तु परिस्थितियों को नहीं बदल सकते | साहित्य अकादमी जैसी संस्थाएं भारतीय समाज में समय-समय पर घटी भयानक घटनाओं पर लगभग खामोश ही रही हैं, यह सभी साहित्यकार जानते हैं ; फिर अचानक साहित्यकारों की अपेक्षाएं अकादमी के प्रति क्यों बढ़ गयी ? "साहित्य अकादमी पुरस्कार लौटाने वाले जब अकादमी के पदाधिकारी थे तब भी ऐसा बयान नहीं दिया गया | पुरस्कार प्राप्त लेखकों के लिए अकादमी के पास विदेशयात्राओं से लेकर कई भाषाओं में पुस्तकें प्रकाशित करने की लाभप्रद योजनाएं थीं और पुरस्कार प्राप्त लेखक इसका लाभ उठाते थे"[7] | स्पष्ट है कि यदि लेखक अति-प्रतिक्रियावादी बनते हैं तो उनके अतीत पर भी प्रश्नचिन्ह लगने की संभावना बनी रहेगी | अत: आरोप-प्रत्यारोप में समय नष्ट करने की अपेक्षा साहित्यकारों एवं आशावादी चिंतन की ओर मोड़ना होगा | इस लक्ष्य की पूर्ती के लिए दृश्य माध्यम, प्रिंट मीडिया, रंगमंच एवं

अत्याधुनिक इंटरनेट से जुडी तकनीक का उपयोग किया जा सकता है |

पुरस्कार लौटाना यह संकेत देता है कि साहित्य जगत में निराशा एवं हताश का वातावरण है | गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने जलियांवाला बाग़ काण्ड के विरोध में सरकार को 'सर' की उपाधि लौटा दी थी | तत्कालीन परिस्थितियों में यह एक उचित प्रतिक्रिया थी | किन्तु वर्त्तमान समय में होने वाली सांप्रदायिक घटनाएँ दलगत राजनीति से प्रेरित हैं | इस तथ्य को समझाते हुए लेखकों को जनमानस की नीर-क्षीर विवेक से ओतप्रोत करने के ठोस प्रयास करने होंगे | यदि अन्ना हजारे युवाओं को ओछी राजनीति के विरुद्ध संगठित कर सकते हैं तो साहित्यकार क्यों नहीं कर सकते ? आज उन्हें वातानुकूलित घरों या कार्यालयों से बाहर निकल कर आम जनता से सीधा संपर्क बनाते हुए उन ताकतों को बेनकाब करना होगा जो कलबरगी , नरेंद्र दाभोलकर और गोविन्द पंसारे जैसे विद्वानों और समाज सुधारकों का खून बहाने के पीछे ज़िम्मेदार है |

साहित्यकारों को क्षुद्र राजनीतिज्ञों के हाथों का मोहरा बनने से बचना होगा | यदि सामूहिक हत्याकांड या भीषण त्रासदी पर मूक रहकर अपने हितों की सुरक्षा करते हुए लेखक अथवा बुद्धिजीवी किसी दूसरी त्रासदी पर कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं तो उस पर प्रश्नचिन्ह लगाना सामान्य बात है | लेखक के लिए समुदाय या सरकारें महत्वपूर्ण नहीं होनी चाहिए, इंसान और न्याय व्यवस्था महत्वपूर्ण होनी चाहिए | यदि बुद्धिजीवियों की प्रतिक्रया संतुलित होगी तो पक्ष-विपक्ष, सहमति-असहमति के प्रश्न स्वयं मेव समाप्त हो जाएंगे | दिल्ली के निर्भय काण्ड में युवती यदि किसी दुसरे समुदाय की होती तो निश्चित रूप से इसे सांप्रदायिक असहिष्णुता की संज्ञा दी जाती | इसलिए साहित्यकार

का यह दायित्व है कि घटना के सभी पक्षों को देखने-परखने के बाद ही प्रतिक्रिया के बारे में विचार करें |

लेखकों को सरकार पर दबाव बनाने के लिए सामूहिक रूप से सकारात्मक प्रयास करने चाहिए | पुरस्कार लौटा कर कुछ समय के लिए किसी सरकार की छवि धूमिल की जा सकती है, किन्तु उस की सोंच नहीं बदली जा सकती | आज आवश्यकता इस बात की है कि लेखक दूसरों को क्या करना चाहिए, यह बताने की अपेक्षा यह तय करे कि उसे लोकतांत्रिक संस्थाओं को दृढ़ता प्रदान करने के लिए क्या करना है | बुद्धिजीवी वर्ग के सामने लक्ष्य स्पष्ट होगा तब अनेक समस्याओं के साथ असहिष्णुता की समस्या का समाधान भी अवश्य हमारे सामने उपस्थित होगा | यह कितने आश्चर्य की बात है कि जब यातायात के साधन सीमित थे, जनसंचार के साधनों का अभाव था, उस समय में भी हमारे साधकों और साहित्यकारों ने भारतीय जनमानस को नवीन दिशा प्रदान की, उनके सोये हुए स्वाभिमान को जगाया, सामाजिक और राजनैतिक क्रान्ति के लिए उन्हें प्रेरित किया और सफल भी हुए | आज जब विश्व एक गाँव बन चूका है तो हमारे साहित्यकारों को अपने दायित्व को स्वीकार करने का साहस अवश्य जुटाना चाहिए और जिन प्रश्नों को लेकर वे सरकार या संस्थाओं की ओर ऊँगली उठाते हैं, उन प्रश्नों का उत्तर ढूँढने के लिए उन्हें स्वयं आगे आना होगा | साम्प्रदायिक उन्माद, धर्मान्द्धता और तानाशाही का जुबानी विरोध करने से बड़ा काम यह होगा कि लोगों में परस्पर सहयोग एवं सहिष्णुता, बहुलता और भारतीय संविधान में स्थापित-मूल्यों का प्रचार-प्रसार किया जाए | विभाजनकारी शक्तियों के विरोध का यही उपाय सर्वाधिक कारगर भी है और साहित्यकार का पावन

दायित्व भी इसे सूत्र रूप में अपनाकर साहित्यकार समाज को समरसता प्रदान कर सकते हैं |

सन्दर्भ :-

1. उदयप्रकाश, फेसबुक पोस्ट, ४ सितम्बर २०१५ |
2. कृष्णा सोबती, इण्डिया टुडे, संपा. अरुण पूरी, वर्ष: २९, अंक : 50, नई दिल्ली : लिविंग मीडिया इण्डिया लि०, २२-२८ अक्टूबर २०१५, पृ. 13 |
3. इण्डिया टुडे, वही, पृ. 15 |
4. ...पृ. 19 |
5. ...वही, पृ. 18 |
6. सुभाष सेतिया, अपने समय का आईना, नई दिल्ली, कल्याणी शिक्षा परिषद्, २०१२, पृ. 83 |
7. असगर वजाहत, इण्डिया टुडे, वही, पृ. 18 |

डॉ. अनीता शर्मा

एसोसिएट प्रोफ़ेसर

स्नातकोत्तर हिंदी विभाग

ई. मेल : *dranitas72@gmail.com*